# हिन्दी आलोचना की लोकपक्षीय चेतना के मार्क्सवादी आलोचक चौथीराम यादव : विश्लेषणात्मक अध्ययन


## हिन्दी विभाग

## ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा


के अंतर्गत मानविकी संकाय के हिन्दी विषय में

पी-एच0 डी0 उपाधि हेतु प्रस्तावित

## शोध-प्रारूप


**शोध-निर्देशक**

डॉ0 सुरेन्द्र प्रसाद सुमन

एसोसियेट पोफेसर

विश्वविध्यालय हिन्दी विभाग

ल0 ना0 मि0 वि0 दरभंगा

**शोधार्थी**

वेदप्रकाश भारती

रोल क्रमांक- 22090090

# हिन्दी आलोचना की लोकपक्षीय चेतना के मार्क्सवादी आलोचक चौथीराम यादव : विश्लेषणात्मक अध्ययन

## प्रस्तावना :

आलोचना लेखक और पाठक के बीच सिर्फ सेतु का ही काम नहीं करती बल्कि, दोनों को दृष्टिसंपन्न भी बनाती है। सच पूछिए तो साहित्य में चित्रित जन और जनतंत्र की धड़कनें आलोचना में उच्छवासित होती हैं। यह रचना और पाठक के बीच तादात्म्य स्थापित करने की सम्पूर्ण सम्प्रेषण यात्रा के बहुआयामी पक्षों को उद्घाटित करती है। हिन्दी समालोचना का प्रारंभिक काल सिर्फ गुण–दोष विवेचनयुक्त छुई-मुई अवस्था तक ही सीमित था। आचार्य रामचंद्र शुक्ल जिस जनता की चित्त वृति को साहित्य की चित्त वृति के रूप में समारोहण करते हुए साहित्येतिहास से लेकर आलोचना तक की यात्रा करते हैं, उसमें बहुजन के बदले अभिजन हैं और उन्हीं का मंगल है। उनके लोक मंगल में अभिजन मंगल ही है।

भारतीय पुनर्जागरण का काल ही हिन्दी समालोचना का उदय काल था। हिन्दी के वरिष्ठ आलोचक आचार्य रामस्वरूप चतुर्वेदी पुनर्जागरण की जिन दो प्रमुख धाराओं अथवा जातियों की संस्कृतियों के बीच टकराहट से उत्पन्न सृजनात्मकता में हिन्दी समालोचना का विकास देखते हैं, वह सिर्फ आलोचना की धाराएं न होकर दर्शन की धाराएं थीं। आलोचना की उन कई धाराओं में बहुजन और अभिजन की धाराएं भी समाहित थीं।

यह भी स्मरण रहे कि अंगरेजी औपनिवेशिक काल में यही अभिजन अथवा आभिजात्य सांस्कृतिक धारा यूरोपीय सांस्कृतिक धारा से चोली-दामन का संबंध स्थापित कर जहां एक ओर भारतीय सामंतवाद को पूंजीवाद में रूपांतरित कर रही थी वहीं दूसरी ओर साम्प्रदायिकता को भी जन्म दे रही थी। लेकिन उसके बरक्स भारतीय बहुजनवादी सांस्कृतिक धारा अपने पूरे प्रतिरोधी तेवर के साथ सांस्कृतिक जनवाद का परचम लहराते हुए अंगरेजी दासता से मुक्ति के साथ ही मुकम्मल मुक्ति के लिए परवान चढ़ रही थी। हिंदी आलोचना भी इन्हीं

दो साहित्यिक-सांस्कृतिक धाराओं के द्वंद्वात्मक विकास के सहारे आगे बढ़ रही थी।

पूरी दुनिया में चिंतन परम्परा अथवा दर्शन की सिर्फ दो ही धाराएं हैं- भाववादी तथा भौतिकवादी। इन्हीं दो धाराओं ने दुनियाभर में सभ्यता, संस्कृति, मनोविज्ञान, ज्ञान-विज्ञान, इतिहास, साहित्य, सिद्धांत और प्रमुख समीक्षा सिद्धांतों को भी प्रेरित किया है। हां, यह बात दीगर है कि पाश्चात्य देशों में फ्रांस की राज्य क्रांति, इंग्लैंड की औद्योगिक क्रांति, सोवियत संघ की समाजवादी क्रांति सहित दो-दो विश्व युद्धों के परिणामस्वरूप आधुनिकता या उत्तर आधुनिकता का प्रादुर्भाव भारत से बहुत पहले हो चुका था। यही कारण है कि पाश्चात्य सभ्यता-संस्कृति और समीक्षा सिद्धांतों ने भारतीय मनीषा को काफी हद तक प्रभावित किया। भारत में भी भाववादी और भौतिकवादी चिंतन धाराओं की प्राचीनतम से लेकर अब तक की लम्बी दास्तां हैं। संयोगवश भारत में कुल नौ दर्शनों में से मात्र तीन दर्शन ही भाववादी दर्शन हैं और शेष छः दर्शन मूलतः भौतिकवादी दर्शन ही हैं। लेकिन विडम्बना यह है कि तीन दर्शन के वर्चस्व ने भारत को ब्राह्मणवाद, सामंतवाद, पूंजीवाद से लेकर फासीवाद की चरम अवस्था तक पहुंचा दिया और जिनके पल्ले छः दर्शन पड़े, वे आबादी के हिसाब से पच्चासी प्रतिशत होते हुए भी तमाम तरह के हक-हकूक से वंचित रहकर दरिद्रता की दरी बिछा रहे हैं। हजारों साल के शोषण-उत्पीड़न और दमन से मुक्ति की कोई भी किरण उनके द्वार तक नहीं पहुंच सकी है। सिर्फ गहन गहराता अंधेरा ही छाया रहा।

भारत में आधुनिकता के प्रवेश के साथ-साथ राष्ट्रीयता और खड़ीबोली हिन्दी का विकास हुआ और उसके साथ ही हिन्दी गद्य एवं उसकी एक महत्त्वपूर्ण विधा के रूप में आलोचना का उदय हुआ। वह दौर भारत में स्वाधीनता आन्दोलन का दौर था जो समग्र रूप से अपनी राष्ट्रीय पहचान के बतौर स्वतःस्फूर्त ढंग से प्रस्फुटित हुआ था। इसके पूर्व प्रांतीय अथवा क्षेत्रीय स्तर पर अंगरेजी हुकूमत के खिलाफ संथाल विद्रोह, हूल विद्रोह, भील विद्रोह और सियोल विद्रोह सहित कई छोटे-बड़े आंदोलन संचालित हो चुके थे, जिसमें बिरसा मुंडा सहित कितने ही योद्धा अपनी जान गवां चुके थे। इसके साथ ही देशी रियासतों एवं ब्राह्मणवादी-सामंती जुल्म के खिलाफ भी सामाजिक स्तर पर

लगातार संघर्ष चल ही रहे थे। जो सामाजिक और आर्थिक रूप से हाशिए पर धकेल दिए गए थे, उनके लिए अंग्रेजों से कहीं अधिक खूंखार बड़े-बड़े जमींदार सवर्ण सामंती ही थे। स्वाधीनता आन्दोलन के पूरे दौर में अंग्रेजों की दलाली करने में उनकी भूमिका सबसे अव्वल थी। यही कारण है कि स्वाधीनता आंदोलन के जोर पकड़ते ही अंग्रेजों ने सुरक्षा कवच (safety valve) के बतौर 1885 ई.में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना की थी, जिसके अध्यक्ष एक अंग्रेज पदाधिकारी ए.ओ. ह्यूम बनाए गए थे।

जिस सतावनी क्रांति को भारत का प्रथम स्वाधीनता संग्राम कहा गया है, वह अपने राष्ट्रीय स्वरूप में पूर्व के कई आंदोलन समूहों सहित कई धाराओं को समेटे हुए था, जो दलित, वंचित, आदिवासी एवं अल्पसंख्यक समाज के कतिपय स्त्री-पुरुष नायकों-नायिकाओं के बलिदानों से निर्मित हुआ था। अंग्रेजों द्वारा जबरन मारे गए अल्पसंख्यक समुदाय के एक राजमिस्त्री मजदूर के इंकलाबी शायर पुत्र अजीमुल्ला खां, जिन्हों ने हिंदी-उर्दू की पहली साझी पत्रिका 'पयामे आजादी' का संपादन किया तथा राष्ट्रगीत होने का हकदार होनेवाला तराना "हम हैं इसके मालिक हिन्दुस्तां हमारा/पाक वतन है कॉम का जन्नत से भी प्यारा" दिया और मिर्जा ग़ालिब,जिन्हें सतावनी क्रांति का मस्तिष्क कहा गया है; उन सभी को दरकिनार करके सतावनी क्रांति का कोई मुकम्मल पाठ हो ही नहीं सकता है। आगे चलकर अंग्रेजों की 'फूट डालो-राज करो 'की नीति के चलते भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के भीतर से ही हिंदू महासभा और मुस्लिम लीग जैसे कट्टर साम्प्रदायिक संगठनों का भी गठन हुआ। लेकिन स्वाधीनता की चाहत रखनेवाली मुख्य धारा में जहां एक ओर दादा भाई नौरोजी, पुरुषोत्तम दास टंडन, रानाडे, राजाराम मोहन राय, महात्मा गांधी वगैरह थे वहीं दूसरी ओर सर्वप्रथम पूरी आजादी की मांग करनेवाले और 'इंकलाब- जिंदाबाद' का नारा देनेवाले कम्युनिस्ट शायर हसरत मोहानी के अलावे 'गुलामगिरी' के रचयिता ज्योतिबा फुले और अम्बेडकर सहित कई बहुजन नायक भी थे।

समकालीन जनमत के प्रधान संपादक रामजी राय ने अपने आलेख 'डॉ अम्बेडकर:एक पुनर्मूल्यांकन' में लिखा है कि- "हमारे पुनर्जागरण में, हमारे स्वतंत्रता आंदोलन में राष्ट्र-निर्माण की मुख्यतः जो दो धाराएं रहीं, उसके दो

प्रतीक नाम हैं-राजाराम मोहन राय और ज्योतिबा फुले तथा महात्मा गांधी और डॉ अम्बेडकर। ये दोनों विचार श्रेणियां आज के वर्तमान समय में भी टकरा रही हैं। इसलिए भी डॉ अम्बेडकर का पुनर्मूल्यांकन जरूरी है।" संक्षेप में हम इन्हीं दार्शनिक, राजनीतिक एवं समाजार्थिक परिप्रेक्ष्य में साहित्यिक-सांस्कृतिक विकास परम्परा से गुजरते हुए हिंदी आलोचना के विकास और आलोचक चौथीराम यादव के आलोचनात्मक अवदान का विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करना चाहेंगे।

स्वाधीनता आन्दोलन से लेकर अभी तक हिन्दी आलोचना ने लगभग एक सौ तिहत्तर वर्षों का सफर तय किया है, जिसकी अपनी ढ़ेर सारी समस्याएं हैं और उसके वर्तमान स्वरूप को लेकर कई सारे सवाल भी हैं। भारतेंदु युग, द्विवेदी युग, छायावाद युग, प्रगतिवाद युग, प्रयोगवाद-नवलेखन युग, साठोत्तरी युग, समकालीन युग और उत्तर आधुनिक युग तक अलग-अलग परिस्थितियों, कई विचार श्रणियों एवं प्रवृत्तियों की टकराहटयुक्त अनुगूंज से भरे कंटकीय रास्ते की द्वंद्वात्मक ऐतिहासिक विकास यात्रा है। आलोचकों ने समय-समय पर तद्युगीन नये संदर्भों से जनमनेवाली नई संवेदनशीलता को उजागर करने के साथ ही महत्वपूर्ण कृतियों के अनुद्घाटित मूल्यों एवं उनमें अन्तर्निहित सौंदर्य की पहचान कराकर पाठकों के रुचि-संस्कार को संवारने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। यह सच है कि सही मूल्यांकन के अभाव में भवभूति, कबीर, रैदास, मीरा, निराला, नागार्जुन, त्रिलोचन, केदारनाथ अग्रवाल, महाश्वेता देवी, ओमप्रकाश वाल्मीकि, तुलसीराम सहित कतिपय महत्वपूर्ण साहित्यकारों के महत्व के मूल्यांकन में और उनकी कृतियों की मूल्यवत्ता को उजागर करने में बहुत विलम्ब हुआ। इसके साथ ही आज तक भी बहुत सारे महत्वपूर्ण साहित्यकार आलोचना के दायरे से बाहर हैं।

सवाल यह भी है कि आलचकों द्वारा पाठकों पर थोपी गई दृष्टि और आस्था को किस सीमा तक बर्दाश्त किया जाए? इसका माकूल जवाब यही हो सकता है कि आलोचकों की दृष्टि और आस्था वहीं तक बर्दाश्त-ए-काबिल है जहां तक वह रचना में निहित जीवन सापेक्ष्य सौंदर्य बोध और युग संवेदना की वैज्ञानिक परख एवं विवेचन में सहयोग दे। लेकिन मतभेद भी यहीं से प्रारंभ

होते हैं। मुक्तिबोध रचित 'नये साहित्य का सौंदर्य शास्त्र और ओमप्रकाश वाल्मीकि रचित 'दलित साहित्य का सौंदर्य शास्त्र' हमसे बहुत सारे सवाल पूछते हैं कि आखिर हाशिए के समाज को केंद्र में रखकर लिखनेवाले हाशिए के समाज के महत्वपूर्ण रचनाकार कब तक हाशिए पर रहेंगे? मौजूदा दौर के आलोचकों को इन वाज़िब सवालों से भी रू-ब-रू होना ही पड़ेगा। लगे हाथ कुछ प्रमुख मतवादों का भी हम संक्षेप में उल्लेख कर देना चाहेंगे। अलग-अलग आलोचना पद्धति के आलोचक मतवादों का बवंडर खड़ा करने में भी पीछे नहीं थे। छठे दशक में रूपवादी आलोचना पद्धति ने अपने प्रतिमान का बोध कराते हुए "अनुभूति की प्रामाणिकता", भोगा हुआ यथार्थ, लघुमानववाद आदि पारिभाषिक शब्द और मुहावरे उछालते हुए हिन्दी आलोचना में प्रवेश किया। रूप और शिल्प को अधिक महत्व देनेवाली इस समीक्षा पद्धति के कारण कई समस्याएं भी खड़ी हुईं। साहित्य के सामाजिक सरोकार को नकारने के परिणामस्वरूप यह समीक्षा पद्धति व्यक्तिवाद के अंध गलियारे में भटक कर रह गई। वस्तुतः यह समीक्षा पद्धति सौंदर्यानुभूति की व्याख्या और विश्लेषण तक ही सिमट कर रखने की प्रवृत्ति है जो सौंदर्य शास्त्रीयता तक घसीट कर ले जाती है। रूपवादी मूल्यांकन भी वस्तून्मुखी दृष्टि की महत्ता को स्वीकारता है लेकिन साहित्य से समाज और लेखकीय आस्था के बहिष्कार की अवधारण के आधार पर, जिससे उसकी वस्तून्मुखता खंडित होती है और विशुद्ध साहित्यिक मूल्यों पर अनावश्यक बल देने के कारण वह भी अतिवाद का शिकार हो जाता है।

जाने-माने मार्क्सवादी आलोचक डॉ सुरेंद्र प्रसाद ने 'साहित्य-समालोचना की समस्याएं एवं वर्त्तमान स्वरूप' शीर्षक अपने आलेख में लिखा है कि-"किसी साहित्यिक कृति के मूल्यांकन का प्रतिमान क्या हो, क्या साहित्य को सामाजिक प्रेरणा और प्रभाव से मुक्त रखने में सार्थक माना जाए, अथवा कृति को अभिप्राय, प्रभाव और आस्था से संदर्भित कर परखा जाए, क्या साहित्य संसार की समाज-निरपेक्ष स्वायत्तता की स्वीकृति में आलोचना की सार्थकता है या उसकी समाज-सापेक्ष्य स्वतंत्रता और अस्तित्व के अहसास में-ऐसे अनेक प्रश्न आलोचना की बात चलाते ही हमें घेरने लगते हैं।"

मार्क्सवादी आलोचना पद्धति के मार्क्सवादी आलोचक समाज और आस्था को समेट कर चलते हैं। उनका मुख्य उद्देश्य वर्ग-संघर्ष के परिप्रेक्ष्य में साहित्यिक मूल्यों का उद्घाटन करना होता है। मार्क्सवाद ऐसी रचना को खारिज करता है जो वैयक्तिक संत्रास, घुटन और मानसिक सड़ांध की दुनिया सिरजती है। यह आलोचना सर्वहारा का पक्षधर है और रचना के स्तर पर भी रचनाकार से ऐसी ही पक्षधरता की उम्मीद रखती है। चूंकि मार्क्सवादी दर्शन वैज्ञानिक चेतना संपन्न दर्शन है, अतः मार्क्सवादी आलोचना पद्धति भी आत्मोन्मुखता के बरक्स वस्तून्मुखी है। इस पद्धति में जीवन ही सौंदर्य का स्रोत और लक्ष्य है, द्वंद्वों की यात्रा ही विकास यात्रा है। इसलिए मार्क्सवादी आलोचना का यह तकाजा है कि रचनाकार व्यक्ति, समाज और बाह्य परिवेश के बीच मौजूद बाहरी और भीतरी द्वंद्वपूर्ण संबंधों के उन तमाम सूत्रों को तलाश कर उनमें से उन तत्वों के संकेत की समझ विकसित करके जीवन के सड़े-गले पक्ष को काटकर नये सृजन में सहकार हो। लेकिन यह भी स्मरण रहे कि भारतीय समाज की बनावट और उसके विकास के अनुकूल मार्क्सवादी आलोचना की समझ और उसके व्यवहार में अंतर के परिणामस्वरूप कई समस्याएं उठ खड़ी हुईं। यूरोपीय मुल्कों या अन्य समाजवादी मुल्कों के मार्क्सवादी समीक्षकों अथवा सिद्धांतकारों तथा भारतीय मार्क्सवादी आलोचकों अथवा सिद्धांतकारों में कुछ गिने-चुने महत्वपूर्ण आलोचकों को छोड़कर दोनों की समझ में काफी अंतर है।

भारतीय समाज जैसी जटिलताएं कहीं नहीं हैं। भारतीय समाज सभ्यता के विकास के प्रारंभ से ही वर्गों, सम्प्रदायों एवं वर्णों में विभक्त रहा है। यहां ब्राह्मणवाद-सामंतवाद-पूंजीवाद का अंतर्संबंध प्रारंभिक काल से लेकर अभी तक है। बल्कि मौजूदा दौर में तो भारतीय फासीवाद, ब्राह्मणवाद और साम्राज्यवाद का जारज पुत्र ही है। इन अंतर्गुत्थियों को समझे बगैर न तो रचना की अंतर्गुत्थियों को समझा जा सकता है और न ही किसी आलोचना पद्धति की अंतर्गुत्थियों को समझा जा सकता है। इसलिए मेरा यह स्पष्ट मानना है कि भारतीय समाज और साहित्य के इस यथार्थ को समझने में हृदय की मुक्तावस्था से रस वर्षा कर लोकमंगल की बात करनेवाले आचार्य रामचंद्र शुक्ल, जीवन को साध्य माननेवाले मानवतावादी आलोचक आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी, मनोविश्लेषणवादी-छायावादी डॉ नगेन्द्र, फ्रायड के

मनोविश्लेषणवाद तथा प्रथम एवं द्वितीय विश्वयुद्ध की निराशा-हताशा, परजय से उत्पन्न अस्तित्ववादी दर्शनिक किर्केगार्द, कार्ल यास्पर्स, मार्टिन हाइडेगर और ज्यां पाल सार्त्र के अस्तित्वादी दर्शन से प्रभावित अज्ञेय, इलाचंद्र जोशी, पूंजीवादी सभ्यता के साम्राज्यवादी देशों से आयातित साहित्य सिद्धांत, समाज विज्ञान, अर्थनीति एवं आचार दर्शन के पैरोकार विजयदेव नारायण शाही, श्रीकांत, निर्मल वर्मा, विष्णु खरे, डॉ जगदीश, रामेशचंद्र शाह, डॉ धर्मवीर भारती आदि से लेकर मैक्सिम गोर्की, लुशून, लोर्का, क्रिस्टोफर कॉडवेल, लूनाचार्स्की, चेर्निवस्की जैसे कतिपय धुर मार्क्सवादी लेखकों एवं आलोचकों से प्रेरणा ग्रहण करनेवाले हिन्दी के तथाकथित मूर्धन्य मार्क्सवादी आलोचक डॉ रामविलास शर्मा, नामवर सिंह सहित कतिपय मार्क्सवादी आलोचक बहुत पीछे छुट जाते हैं या जान बूझकर अनदेखी कर देते हैं।

चार्वाक, महात्मा बुद्ध सिद्धों-नाथों आदि की ब्राह्मणवाद विरोधी लोकजागरण की सांस्कृतिक परम्परा में सर्वप्रथम सांस्कृतिक जनवाद का परचम लहरानेवाले इंकलाबी अग्रदूत कबीर-रैदास हिन्दी आलोचना में सिरे से गायब कर दिए जाते हैं। लेकिन यह सोता कभी सूखता नहीं है। उसकी वेगवती धारा पूरे स्वाधीनता आन्दोलन में अंगरेजी दासता के साथ-साथ ब्राह्मणवादी दासता से भी बगावत करते हुए आगे बढ़ती है, जिसके नायकों में ज्योतिबा फुले, अम्बेडकर, पेरियार और भगत सिंह सहित कतिपय नामी और बेनामी योद्धा थे। यही वह लोकजागरण है, जो आधुनिक भारत का पुनर्जागरण भी है। हिन्दी के धुर क्रांतिकारी मार्क्सवादी आलोचक इसी पुनर्जागरणवादी धारा के आलोचक हैं। मुक्तिबोध और चौथीराम यादव भी इसी धारा के लोकपक्षीय क्रांतिकारी मार्क्सवादी आलोचक हैं। मुक्तिबोध और चौथीराम यादव का लोक भी एक ही है जो वेद से दो-दो हाथ करते हुए उसके समानांतर आगे बढ़ते जाता है। सच पूछिए तो कबीर का यूटोपियाई अमरपुर या अमर देसवा तथा रैदास का वेगमपुरा ही आधुनिक युग में कार्ल मार्क्स का वैज्ञानिक साम्यवाद बन जाता है। मुक्तिबोध, नागार्जुन और चौथीराम यादव के आदि परम गुरु वही मर्मी कबीर हैं, जो भक्ति आंदोलन से लेकर आज तक के जनान्दोलनों के आगे-आगे मशाल थामे चल रहे होते हैं। जब कबीर लोकजागरण की अलख जगाते हुए वेदसम्मत ब्राह्मणवादी फांस को काटकर लोक से संवाद की मुद्रा में कहते हैं-

“तू कहता कागद के लेखी, मैं कहता आंखिन की देखी/ मैं कहता सुलझावन हारी, तू राखे उलझाई रे /तेरा मेरा मनुआ कैसे एक होई रे"

यहां स्पष्ट रूप से लोक और वेद अथवा शास्त्र के मनभेद को दो टूक शब्दों में कबीर ने उजागर किया है। कबीर की यही आंखिन देखी सामाजिक यथार्थ मुक्तिबोध, नागार्जुन और चौथीराम यादव के लिए भी अपने दौर में सामाजिक यथार्थ को समझने का और पूंजीवादी-ब्राह्मणवादी जाल से समाज को मुक्त करने का औजार बन जाता है। यही कारण है कि मुक्तिबोध कबीर को ही अपना परम उस्ताद मानते हुए लिखते हैं--

"भव्य हजारों साल पुराने ओ बूढे उस्ताद/तुम्हारी क्रियावान-वेदना क्या कहना/तुम बाजार में खड़े स्वयं जलती मशाल--/ब्रह्म-रंध्र में गूंजेगा फिर द्रोही-अनहद नाद, ओ बुजुर्ग उस्ताद।"

आधुनिक आलोचना के इतिहास में अब तक के सबसे प्रखर मार्क्सवादी कवि-आलोचक के रूप में मुक्तिबोध ही समादृत हैं, जिनसे चौथीराम यादव की आलोचना दृष्टि को भी प्रेरणा मिलती है। आलोचक चौथीराम यादव जिस दलित और स्त्री की मुक्ति को मुकम्मल मुक्ति का प्रवेश द्वार मानते हैं, मुक्तिबोध उसकी मुक्ति के बगैर मुकम्मल मुक्ति की कल्पना भी नहीं करते हैं-

"तुम्हारी मुक्ति उनके प्रेम से होगी /सब सहाय उनसे लो/कि मुक्ति के रास्ते अकेले में नहीं मिलते।"

चौथीराम यादव जिस हाशिए के शोषित-पीड़ित-वंचित समाज के नायकों को अपना नायक मानकर मुकम्मल मुक्ति की पटकथा रचते हैं वही नागार्जुन के यहां बलचनमा, कलुआ, पारो, इमरतिया आदि-आदि बनकर सम्पूर्ण क्रांति का वेरा पार करनेवाला नायक है और मुक्तिबोध के यहां मुल्क को बेहतर बनानेवाला मेहतर, भूख से आंत बैठा चुकी मुनिया तथा आदिवासी नायक समीर है। सन् 1936ई में मार्क्सवादी दर्शन से प्रादुर्भूत प्रगतिवाद और प्रगतिशील लेखक संघ का उदय हुआ था, किंतु पूंजीवादी घात-प्रतिघात-झंझावात और शासक वर्गीय चकाचौंध के कारण 60के दशक में प्रगतिवादी धारा क्षीण होने लगी थी। लेकिन जब 1967 में नक्सलबाड़ी के सशस्त्र किसान विद्रोह ने दलितों, आदिवासियों

सहित पूरे शोषित-पीड़ित-वंचित समाज का हौसला बुलंद किया, जिसकी अनुगूंज वसंत का वज्रनाद की तरह भारत सहित विश्व भर के साहित्यिक-सांस्कृतिक जगत में कौंध गई। इसके परिणामस्वरूप प्रलेस, जलेस के सक्रिय होने के साथ ही नक्सलबाड़ी धारा के साहित्यिक-सांस्कृतिक संगठन जन संस्कृति मंच की स्थापना हुई। उसके बाद उत्तर आधुनिक दौर में वैश्विक उत्तर पूंजीवाद से त्रस्त होकर अपनी अस्मिता की हिफाज़त के लिए चिंतित हाशिए के समाज के साहित्यकारों एवं संस्कृतिकर्मियों ने दलेस और आलेस जैसे संगठनों की भी स्थापना की।

आधुनिक युग में आलोचक चौथीराम यादव ने आधुनिक भारत के निर्माता राष्ट्र-नायक के बतौर शहीद-ए-आजम भगतसिंह और अम्बेडकर को ही अपना असली नायक माना। लोकपक्षीय चेतना के मार्क्सवादी आलोचक चौथीराम यादव प्रलेस, जलेस, जसम, दलेस और आलेस जैसे मंचों पर हमेशा सम्मानित होते रहे और उन्हीं मंचों पर अवाजाही करते हुए इंकलाबी पुनर्जागरण की अलख जगाते रहे। इन्हीं धाराओं में लोकपक्षीय चेतना के क्रांतिकारी मर्क्सवादी आलोचकों में मुक्तिबोध के बाद की पीढ़ी में चौथीराम यादव के अलावे मैनेजर पांडेय, तुलसीराम, सुरेंद्र प्रसाद, रामनिहाल गूंजन, राजेंद्र कुमार, कंवल भारती, रामजी राय, अवधेश प्रधान, प्रणय कृष्ण, गोपाल प्रधान, पंकज विष्ट, मलय पानेरी, राणा प्रताप, आशुतोष कुमार, शंभु बादल, रविभूषण, वीरेन्द्र यादव, सूरज बहादुर थापा, श्योराज सिंह बेचैन, मृत्युंजय, भंवर मेघवंशी, महेश चंद्र पुनेठा, सुभाषचंद्र कुशवाहा, युवा आलोचक रामायन राम, रामनरेश राम, स्त्री आलोचक एवं लेखिका मन्नू भंडारी, रमणिका गुप्ता, मैत्रेयी पुष्पा, निर्मला पुतुल, वंदना टेटे, कात्यायनी, रजनी तिलक, अनिता भारती, भाषा सिंह आदि कतिपय आलोचकों के नाम शुमार हैं।

आलोचक चौथीराम यादव की प्रमुख आलोचनात्मक कृतियों में-'हजारी प्रसाद द्विवेदी समग्र: पुनरावलोकन', 'लोकधर्मी साहित्य की दूसरी धारा', 'उत्तरशती के विमर्श और हाशिए का समाज', 'सांस्कृतिक पुनर्जागरण और छायावादी काव्य', लोक और वेद आमने-सामने'और 'आधुनिकता का लोकपक्ष और साहित्य' इत्यादि प्रमुख हैं। इन्हीं मूल्यवान कृतियों के माध्यम से लोकजागरण के

प्रतिरोधी स्वर को अपना मूल स्वर मानते हुए चौथीराम यादव अपनी इंकलाबी आलोचना यात्रा को नया आयाम प्रदान करते हैं। अपनी लोकपक्षीय प्रतिरोधी पक्षधरता को उजागर करते हुए उन्होंने अपनी पुस्तक 'आधुनिकता का लोकपक्ष और साहित्य' की भूमिका में स्पष्ट लिखा है कि-"प्रतिरोध का स्वर मूलतः लोकवादी, भौतिकवादी, मानवतावादी एवं जनपक्षधर स्वर है जो तमाम वर्जनाओं से घिरी हुई वर्णवादी ज्ञान-सत्ता और दमनकारी राजसत्ता को समय-समय पर चुनौती देता आया है- चाहे मध्यकाल में सामंतों और पुरोहितों की संयुक्त सत्ता हो या औपनिवेशिक दासता के काल में ब्रिटिश सत्ता, आजाद भारत में सामंतों-पूंजीपतियों के गठबंधन वाली लोकतांत्रिक सत्ता हो या फिर उत्तरशती में बाजारवाद द्वारा नियंत्रित एवं भूमंडलीकरण, निजीकरण, उदारीकरण से संचालित पूंजीवादी सत्ता।"

मेरी दृष्टि में लोकपक्षीय चेतना के मार्क्सवादी आलोचक चौथीराम यादव की इस लोकपक्षीय प्रतिरोधी मार्क्सवादी आलोचनात्मक विकास यात्रा पर अभी तक कोई भी शोध कार्य नहीं हुआ है। इन्हीं महत्वपूर्ण दायित्वों को पूरा करना मेरे शोध कार्य का अभीष्ट है।

## उद्देश्य, महत्व एवं प्रासंगिकता :

भारतीय चिंता-धारा में लोकधर्मी चिंतन की प्रतिरोधी परंपरा उतनी ही पुरानी है, जितनी वर्णाश्रम केंद्रित वर्चस्ववादी विचार परंपरा। प्रतिरोध का स्वर मूलतः लोकवादी, भौतिकवादी, मानवतावादी एवं जनपक्षधर स्वर है जो तमाम वर्जनाओं से घिरी हुई वर्णवादी ज्ञान-सत्ता और दमनकारी राजसत्ता को समय-समय पर चुनौती देता आया है- चाहे मध्यकाल में सामंतों और पुरोहितों की संयुक्त सत्ता हो या औपनिवेशिक दासता के काल में ब्रिटिश सत्ता, आजाद भारत में आधुनिक सामंतों और पूंजीपतियों के गठबंधन वाली लोकतांत्रिक सत्ता हो या फिर उत्तरशती में बाजारवाद द्वारा नियंत्रित तथा भूमंडलीकरण, निजीकरण व उदारीकरण द्वारा संचालित पूंजीवादी सत्ता। प्रतिरोधी चिंतन का मूल स्रोत चार्वाकों, लोकायतों, आजीवकों का भौतिकवादी चिंतन है जो वर्चस्ववादी वैदिक-पौराणिक परंपरा के भाववादी चिंतन के विरुद्ध तनकर खड़ा है। चिन्तन की यह तार्किक प्रणाली अपनी भौतिकवादी दृष्टि के चलते अपने समय-समाज में व्याप्त

ठहराव से बराबर हस्तक्षेप करती आई है। प्रो चौथीराम यादव ने इसी परम्परा को आगे बढाया है।

प्रो चौथीराम यादव ने मार्क्सवादी जनवादी सिद्धांत को अपनी समीक्षात्मक कृतियों के माध्यम से भारतीय परिप्रेक्ष्य में व्याख्यायित किया है। उन्होंने साबित किया है कि शोषण के जो-जो आधार और बिंदु है वे सभी द्वंदात्मक भौतिकवाद में संघर्ष के मुद्दे है। अर्थात भारतीय परिप्रेक्ष्य में भेद-भाव तथा गैरबराबरी और शोषण केवल आर्थिक आधार पर ही नहीं है बल्कि सामाजिक आधार पर भी जारी है। फलस्वरूप संघर्ष और बदलाव के मुद्दे आर्थिक और सामाजिक दोनों ही होने चाहिए। बदलाव की प्रक्रिया दोनों ही स्तरों पर जारी रहनी चाहिए। अर्थात चौथीराम यादव ने आर्थिक बराबरी के साथ ही सामाजिक न्याय और बराबरी को भी द्वंदात्मक भौतिक वाद के अन्दर आत्मसात कर साहित्य का मूल्यांकन करना उचित समझा है। इसतरह उन्होंने भारतीय परिप्रेक्ष्य में समग्र नजरिये से जनवाद को व्याख्यायित किया है। आलोचना के क्षेत्र में यही उनकी नयी दृष्टि है। इसलिय इस पर शोध और विवेचन विश्लेषण कर आकादमिक जगत, शोधार्थी और समाज के सामने उपस्थित करना आवश्यक प्रतीत होता है। इससे अकादमिक जगत, शोधार्थियों और समाज के के लोगों को लाभ होगा ।

## पूर्वकृत शोध :

प्रो चौथीराम यादव के आलोचना पर अबतक कई शोध कार्य किये जा चुके हैं तथापि प्रस्तावित विषय “हिन्दी आलोचना की लोकपक्षीय चेतना के मार्क्सवादी आलोचक चौथीराम यादव : विश्लेषणात्मक अध्ययन” विषय पर शोध कार्य किया जाना अभी शेष है। चौथीराम यादव के आलोचना पर अब तक किये गये प्रमुख शोधकार्य के विवरण निम्नलिखित है।

1. रीना यादव, हिंदी आलोचना और चौथीराम यादव, हिंदी विभाग, बी.एन. मंडल विश्वविद्यालय, मधेपुरा, बिहार, 2020 ।

2. दिवाकर कुमार, हिंदी की आलोचना परंपरा और चौथीराम यादव, हिंदी विभाग, रांची विश्वविद्यालय, रांची, झारखंड, 2020 ।

3. राजू कुमार, चौथीराम यादव के आलोचना साहित्य का अनुशीलन, हिंदी विभाग, भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर, बिहार ।

5. सोनी कुमारी, चौथीराम यादव की आलोना दृष्टि और शैली-हिंदी विभाग, ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार ।

6. दीक्षा कोंवर, हिंदी आलोचना की लोकधर्मी आवाज और चौथीराम यादव, हिंदी विभाग, गोवाहटी, विश्वविद्यालय, असम ।

7. प्रियंका यादव, हिंदी आलोचना का नया स्वर और चौथीराम यादव का आलोचना कर्म, वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर, उ. प्र.।

## शोध कार्य के स्रोत/क्षेत्र :

प्रस्तावित शोध कार्य का अध्ययन क्षेत्र प्रो चौथी राम यादव के सभी रचनाओं का अध्ययन होगा। इसके साथ ही लोकपक्षीय चेतना के आलोचकों, मार्क्सवादी चेतना के आलोचकों और लोकपक्षीय मार्क्सवादी चेतना के आलोचकों की आलोच्य पुस्तकों का अध्ययन एवं विश्लेषण होगा ।

- उत्तरशती के विमर्श और हाशिए का समाज
- हजारीप्रसाद द्विवेदी समग्र पुनरावलोकन
- लोकधर्मी साहित्य की दूसरी धारा
- लोक और वेद : आमने सामने
- लोक जागरण के सूत्रधार
- सांस्कृतिक पुनर्जागरण और छायावादी काव्य
- आधुनिकता के लोक पक्ष और साहित्य

## शोध प्रविधि :

प्रस्तुत शोध में समाजशास्त्रीय शोध प्रविधि का प्रयोग सबसे अधिक किया जाएगा। आवश्यकता पड़ने पर तुलनात्मक प्रविधि का भी प्रयोग किया जाएगा। साथ ही तथ्यों के संकलन, संयोजन एवं विश्लेषण के लिए आगमन और निगमन पद्धति का उपयोग अपेक्षित है। आगमन पद्धति से जहां तथ्यों का संकलन और अनुशीलन संभव हो सकेगा वहीं निगमन पद्धति में शोध के वैज्ञानिक आयामों को तार्किक विवेचन एवं विश्लेषण के द्वारा एक नयी दिशा मिल सकेगी।

## प्रस्तावित अध्ययन/अध्यायीकरण :

| | |
|---|---|
| | भूमिका |
| प्रथम अध्याय : | चौथी राम यादव का व्यक्तित्व और कृतित्व |
| द्वितीय अध्याय : | लोकपक्ष की अवधारणा और परिप्रेक्ष्य |
| तृतीय अध्याय : | लोकपक्ष और मार्क्सवाद |
| चतुर्थ अध्याय : | हिन्दी की आलोचना परम्परा |
| पंचम अध्याय : | हिन्दी आलोचना के लोक पक्षीय चेतना और चौथीराम यादव |
| षष्ठ अध्याय : | हिन्दी आलोचना को चौथी राम का अवदान |
| | उपसंहार |

## सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

1. उत्तरशती के विमर्श और हाशिए का समाज
2. हजारीप्रसाद द्विवेदी समग्र पुनरावलोकन
3. लोकधर्मी साहित्य की दूसरी धारा
4. लोक और वेद: आमने सामने
5. लोक जागरण के सूत्रधार
6. सांस्कृतिक पुनर्जागरण और छायावादी काव्य

7. आधुनिकता के लोक पक्ष और साहित्य

## संभावित स्रोत ग्रंथों की सूची :


1. जब जब देखा लोहा देखा- सं सूरज बहादुर थापा
2. बात कहूँ मैं खरी खरी- सं धर्मवीर यादव गगन, आशीष कु 'दीपंकर'
3. चौथीराम यादव संचियता- सं समीर कुमार पाठक
4. हिन्दी साहित्य की भूमिका- हजारी प्रसाद द्विवेदी
5. हिन्दी साहित्य:उद्भव और विकास- हजारी प्रसाद द्विवेदी
6. नये साहित्य का सौंदर्यशास्त्र- मुक्तिबोध
7. साहित्य की परख- शिवदान सिंह चौहान
8. बदलते परिप्रेक्ष्य-  नेमीचन्द्र जैन
9. आधुनिक हिन्दी आलोचना के बीज शब्द- बच्चन सिंह
10.हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास – रामस्वरूप चतुर्वेदी
11.आलोचना के परिसर – गोपेश्वर सिंह
12.आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास – बच्चन सिंह
13.हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास – बच्चन सिंह
14.नयी समीक्षा- अमृतराय
15.विचारधारा और साहित्य- अमृतराय
16.प्रगतिशील साहित्य के मानदण्ड- रांगेय राघव
17.आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियां- नामवर सिंह
18.दूसरी परम्परा के खोज- नामवर सिंह
19.वाद विवाद और संवाद- नामवर सिंह
20.आलोचक के मुख से- नामवर सिंह
21.समकालीन सिद्धांत और साहित्य- विश्वम्भरनाथ उपाध्याय

22.मीमांसा और पुनर्मुल्यांकन- विश्वम्भरनाथ उपाध्याय

23.समकालीन मार्क्सवाद -विश्वम्भरनाथ उपाध्याय

24.मार्क्सवादी साहित्य चिंतन इतिहास और सिद्धांत- शिवकुमार मिश्र

25.साहित्य और सामाजिक सन्दर्भ -शिवकुमार मिश्र

26.आलोचना के प्रगतिशील आयाम- शिवकुमार मिश्र

27.हिन्दी आलोचना - विश्वनाथ त्रिपाठी

28.आलोचना की रचना यात्रा -धनंजय वर्मा

29.हिन्दी आलोचना का विकास- नंदकिशोर नवल

30.रचना का पक्ष- नंदकिशोर नवल

31.साहित्य और इतहास दृष्टि- मैनेजर पाण्डेय

32.शब्द और कर्म- मैनेजर पाण्डेय

33.साहित्य के समाजशास्त्र  की भूमिका- मैनेजर पाण्डेय

34.आलोचना की सामाजिकता- मैनेजर पाण्डेय

35.अनभै सांचा- मैनेजर पाण्डेय

36.साहित्य और जनसंघर्ष- शम्भुनाथ

37.दूसरा सौंदर्यशास्त्र क्यों ? - परमानंद श्रीवास्तव

38.नये साहित्य का तर्कशास्त्र- विश्वनाथ प्रसाद तिवारी

39.आलोचना के हाशिये- विश्वनाथ प्रसाद तिवारी

40.उपन्यास : स्वरुप और संवेदना- राजेंद्र यादव

41.कहानी अनुभव और अभिव्यक्ति -राजेंद्र यादव

42.कहानी स्वरुप और संवेदना- राजेंद्र यादव

43.रचना और आलोचना - देवीशंकर अवस्थी

44.विवेक के रंग- देवीशंकर अवस्थी

45.आलोचना और आलोचना- देवीशंकर अवस्थी

46.रचना सुर आलोचना- देवीशंकर अवस्थी

47.नई कहानी : सन्दर्भ और प्रकृति- देवीशंकर अवस्थी

48.आलोचना का द्वन्द- देवीशंकर अवस्थी

49.सौंदर्यशास्त्र के तत्व- कुमार विमल

50.कला विवेचन- कुमार विमल

51.हिन्दी साहित्य का इतिहास - रामचंद्र शुक्ल

## पत्रिकाएं

1. तद्भव
2. आलोचना
3. वागर्थ
4. पाखी
5. वर्तमान साहित्य
6. कथादेश
7. हंस
8. समकालीन चुनौती
9. समकालीन विमर्श
10. समकालीन जनमत

**शोध-निर्देशक/प्रवेक्षक**
डॉ0 सुरेन्द्र प्रसाद सुमन
एसोसियेट प्रोफेसर
विश्वविद्यालय हिन्दी विभाग
ल0 ना0 मि0 वि0, दरभंगा

**शोधार्थी**
वेदप्रकाश भारती
रोल क्रमांक 22090090